इकाई 8 बाज़ार के विभिन्न स्वरूप : पूर्ण प्रतियोगिता में कीमत निर्धारण

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य
8.1 प्रस्तावना
8.2 बाज़ार के विभिन्न स्वरूप
8.3 पूर्ण प्रतियोगिता की मान्यताएँ
8.3.1 विशुद्ध एवं पूर्ण प्रतियोगिता
8.4 पूर्ण प्रतियोगिता में संतुलन : उत्पादन और कीमत
8.5 फर्म का संतुलन
8.5.1 अल्पकाल में संतुलन
8.5.2 दीर्घकाल में संतुलन
8.6 सामान्य कीमत
8.7 बाहरी बचतें तथा अपबचतें
8.8 पूर्ण प्रतियोगी उद्योग का आपूर्ति-वक्र
8.8.1 फर्मों की संख्या में परिवर्तन
8.9 सारांश
8.10 शब्दावली
8.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें
8.12 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा दिशा-संकेत

8.0 उद्देश्य

आप इस इकाई के अध्ययन के बाद समझ सकेंगे :

- बाज़ार के विभिन्न स्वरूपों की पहचान;
- पूर्ण प्रतियोगिता की शर्तें और विशेषताएँ;
- फर्म की अल्प और दीर्घकालिक संतुलन की विशेषताएँ;
- पूर्ण प्रतियोगिता उद्योग के संतुलन की शर्तें;
- पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत अल्प और दीर्घकालिक संतुलन में भेद;
- बाहरी बचतों और अपबचतों में भेद; तथा
- पूर्ण प्रतियोगिता में पूर्ति-वक्र का स्वरूप।

8.1 प्रस्तावना

अभी तक हमने यह जाना है कि किस प्रकार माँग और पूर्ति मिलकर बाज़ार व्यवस्था में संतुलन कीमत एवं मात्रा का निर्धारण कर दुर्लभ संसाधनों का आबंटन करते हैं। इकाई 7 के भाग 7.3 में हमने देखा है कि अल्पकाल में ह्रासमान प्रतिफल किस तरह से फर्म की लागतों के स्वरूप को

प्रभावित करते हैं। हमने वहाँ इस बारे में चर्चा की थी कि दीर्घकाल में जब फर्म संसाधनों के प्रयोग में बदलाव ला सकती है तो वह किस तरह से न्यूनतम लागत पर उत्पादन करने में सफल रहती है।

इस इकाई में हमारा ध्यान फर्म द्वारा पूर्ण प्रतियोगिता में अधिकतम लाभ कमाने की प्रक्रिया पर केंद्रित रहेगा। हम जानते ही हैं कि लाभ आगतों तथा लागतों का अंतर होता है। किन्हीं दी गई माँग-पूर्ति की दशाओं में फर्म की आगतें इस बात पर निर्भर करती हैं कि अपने उद्योग में उसे कितनी स्पर्धा या प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है (उद्योग किसी वस्तु बेचने/बनाने वाली सभी फर्मों के समूह का ही नाम है)। उद्योगों को हम चार प्रकार के बाज़ारों पूर्ण प्रतियोगिता, एकाधिकार, एकाधिकारी प्रतियोगिता एवं अल्पाधिकार में रख सकते हैं।

8.2 बाज़ार के विभिन्न स्वरूप

एक पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार या उद्योग की पाँच विशेषताएँ होती हैं: (1) वस्तु के क्रेताओं तथा विक्रेताओं की बड़ी संख्या, (2) किसी भी क्रेता या विक्रेता का बाज़ार कीमत पर कोई नियंत्रण नहीं, (3) उद्योग में आने या इसे छोड़ने पर कोई पाबंदी नहीं, (4) सभी फर्में एक-जैसा उत्पादन करती हैं; तथा (5) बाज़ार के विषय में सभी को पूरी जानकारी सुलभ रहती है।

एकाधिकारी बाज़ार में केवल एक विक्रेता होता है जो कि ऐसी वस्तु बेचता है जिसका निकट प्रतिस्थापक **(close substitute)** उपलब्ध नहीं होता। इस बाज़ार में यह फर्म ही उद्योग होती है यानि उद्योग में केवल एक ही फर्म होती है तथा बाज़ार में प्रवेश पर प्रतिबंध भी हो सकते हैं। फर्म का कीमत पर पूर्ण नियंत्रण रहता है तथा वह (एकाधिकारी) अधिकतम लाभ कमाने के लिए आवश्यक स्तर पर कीमत का निर्धारण करता है। बाज़ार व्यवस्था के इस स्वरूप पर हम इसी खंड की इकाई 9 में विस्तृत चर्चा करेंगे।

पूर्ण प्रतियोगिता तथा एकाधिकार की दो धुरियों के बीच में हम एकाधिकारी प्रतियोगिता और अल्पाधिकार को रखते हैं। एक विशेषता को छोड़कर इसकी बाकी सभी विशेषताएँ वे होती हैं जो पूर्ण प्रतियोगिता बाज़ार की होती है। इसकी अलग विशेषता यह है कि फर्मों के उत्पाद विभेदित **(differentiated)** होते हैं (पूर्ण प्रतियोगिता में उत्पाद समरूप होते हैं)। उत्पाद भिन्न होने से फर्म को कुछ एकाधिकारी शक्ति मिलती है। इससे फर्म कुछ सीमा तक अपने उत्पाद के मूल्य को प्रभावित कर सकती है।

अल्पाधिकार एक और बाज़ार व्यवस्था है। ऐसे उद्योग में कुछ इनी-गिनी फर्में होती हैं। इस बाज़ार की फर्मों की परस्पर निर्भरता इस सीमा तक पहुँच जाती है कि कोई फर्म प्रतिद्वंद्वियों की प्रतिक्रिया का आकलन किए बिना स्वतंत्र रूप से कीमत में परिवर्तन का कोई फैसला नहीं कर सकती। इस व्यवस्था की कुछ व्याख्या हम इकाई 10 में ही करेंगे।

इस इकाई में हमारा सारा ध्यान पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार व्यवस्था में फर्म के उत्पादन की कीमत के निर्धारण पर ही केंद्रित रहेगा।

8.3 पूर्ण प्रतियोगिता की मान्यताएँ

पूर्ण प्रतियोगिता की अवधारणा के दो आधारस्तंभ हैं– (1) फर्म का व्यवहार; तथा (2) जिस उद्योग में फर्म कार्य करती हैं, उसका स्वरूप। फर्म कीमत को स्वीकार करती हैं। यह अपने उत्पादन के स्तर

या विक्रय को बदलकर भी कीमत पर कोई प्रभाव नहीं डाल पातीं। अतः उसे बाज़ार में व्याप्त कीमत पर ही संतोष करना पड़ता है।

उद्योग की सबसे बड़ी विशेषता इसमें प्रवेश तथा निर्गमन की स्वतंत्रता है। इसका अर्थ है जब चाहे नई फर्म इस उद्योग में आ सकती है तथा कोई पुरानी फर्म अपनी इच्छा से उद्योग छोड़ भी सकती है। वर्तमान फर्में, नई फर्मों के आने से नहीं रोक सकती और न ही प्रवेश या निर्गमन पर कोई कानूनी रुकावट होती है।

कीमत स्वीकार करने के व्यवहार के कुछ परिणाम होते हैं। आइए इसे एक उदाहरण द्वारा समझने का प्रयास करें। एक गेहूँ का उत्पादक किसान है और एक कार निर्माता। कार-निर्माता को बाज़ार पर अपना अधिकार मालूम है। अगर यह कारों के दाम बढ़ाएगा तो निश्चित रूप से बिक्री कम हो जाएगी। वह दाम घटाकर अपने प्रतियोगियों के कुछ ग्राहक खींचने का प्रयास भी कर सकता है। अतः यह फर्म कीमत का स्वीकार करने वाली फर्म नहीं है। इसकी माँग-वक्र नीचे की ओर ढलवाँ है तथा यह उसी पर किसी कीमत-उत्पादन संयोजन का अंततः चयन करती है।

परंतु गेहूँ का उत्पादक किसान, कार-निर्माता से कई तरह से भिन्न है। इसी से इसका कीमत-स्वीकृति व्यवहार भी निर्धारित होता है :

एक-समान उत्पादन : कार-निर्माता तो विभेदित **(differentiated)** उत्पादन बेचता है। उसकी तुलना में गेहूँ उत्पादक की स्थिति बहुत भिन्न है। गेहूँ की किसी किस्म में इस बात से कोई फर्क नहीं आता कि उसे किसके खेत में उगाया गया है। अतः सभी किसान एक-जैसा गेहूँ बेचते हैं। यदि किसान ज़रा भी कीमत बढ़ाता है तो सभी लोग दूसरों से गेहूँ खरीदना शुरू कर सकते हैं। अतः कीमत स्वीकार करने का व्यवहार तभी होगा जबकि फर्म समान या समरूप उत्पादन बेच रही हो।

ग्राहक को पूरी जानकारी होना : यह भी कीमत स्वीकृति व्यवहार के लिए आवश्यक शर्त है। कोई भी ग्राहक अनजाने में भी अधिक दाम नहीं देता।

विक्रेताओं की बड़ी संख्या : कार एवं गेहूँ उत्पादकों में एक और बहुत बड़ा अंतर है। एक गेहूँ उत्पादक किसान का कुल उत्पादन में हिस्सा बहुत ही कम होता है। अतः इसके उत्पादन का कीमत पर प्रभाव नहीं पड़ता। वह बाज़ार कीमत पर चाहे जितना माल बेच सकता है। उसकी माँग-वक्र क्षितिजीय अक्ष के समानांतर रहती है।

8.3.1 विशुद्ध एवं पूर्ण प्रतियोगिता

अर्थशास्त्री सामान्यतः विशुद्ध तथा पूर्ण प्रतियोगिता में भेद करते हैं। उपरोक्त शर्तें विशुद्ध प्रतियोगिता की स्थिति बताती है। पूर्ण प्रतियोगिता के लिए कुछ अतिरिक्त मान्यताएँ भी महत्त्वपूर्ण होती हैं– (क) संसाधन एक से दूसरे उद्योग में बिना किसी बाधा के आ-जा सकते हैं; तथा (ख) परिवहन लागतें शून्य हैं।

हमारी आगे की चर्चा पूर्ण प्रतियोगिता पर केंद्रित रहेगी न कि विशुद्ध प्रतियोगिता पर।

बोध प्रश्न 1

1) पूर्ण प्रतियोगिता की पूर्व-धारणाओं का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) एकाधिकार एवं अल्पाधिकार का अंतर दो वाक्यों में समझाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

8.4 पूर्ण प्रतियोगिता में संतुलन : उत्पादन और कीमत

एक पूर्ण प्रतियोगी फर्म को कीमत स्वीकारक कहा गया है, परंतु यह किस कीमत को स्वीकार करती है? पूर्ण प्रतियोगिता में संतुलन कीमत स्तर वह होता है जिसपर बाज़ार में सभी क्रेताओं की कुल माँग सभी फर्मों की कुल पूर्ति के समान हो, अर्थात् जहाँ बाज़ार माँग-वक्र बाज़ार की पूर्ति-वक्र को काटती हो। इसी बाज़ार संतुलन को हमने चित्र 8.1 में दिखाया है। संतुलन बिंदु E पर बाज़ार में OP कीमत पर OQ मात्रा खरीदी और बेची जाती है। प्रत्येक फर्म इसी कीमत को स्वीकार करती है तथा अधिकतम लाभ कमाने का व्यवहार इस कीमत के अनुरूप अपने उत्पादन के स्तर के निर्धारण तक ही सिमट कर रह जाता है।

चित्र 8.1

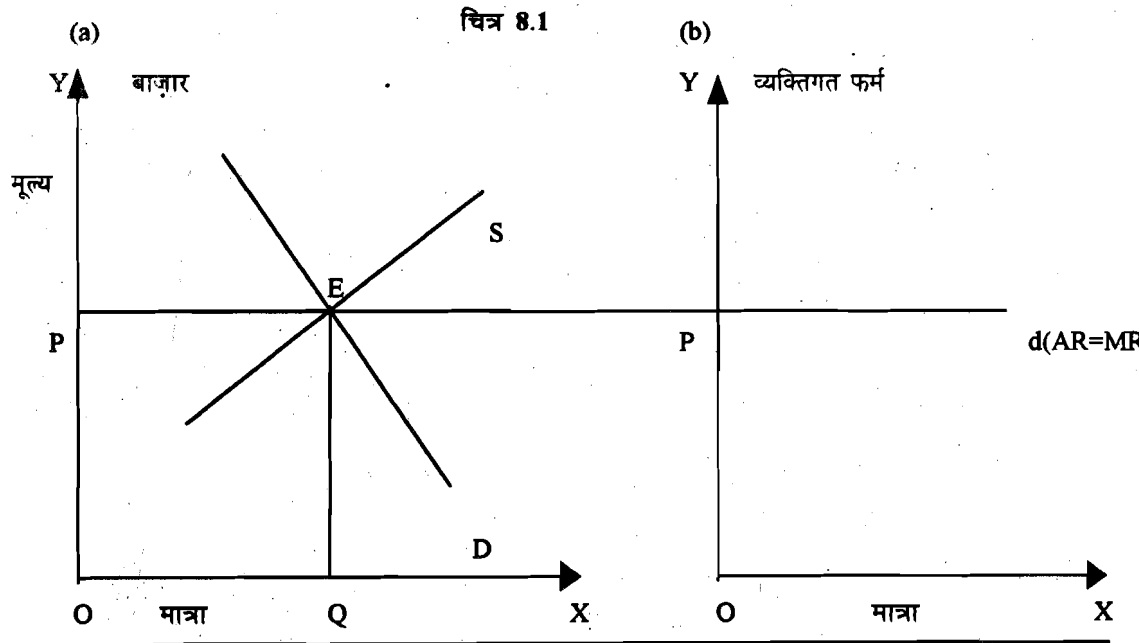

चित्र 8.1 के भाग (a) में बाज़ार का संतुलन बिंदु E पर होता है जहाँ DD तथा SS एक-दूसरे के समान होते हैं। बाज़ार कीमत P निश्चित हो जाती है। इस बाज़ार कीमत पर प्रत्येक फर्म चाहे जितना माल बेच सकती है। अतः भाग (b) में फर्म की माँग-वक्र क्षितिज के समानांतर रहती है।

फर्म अपने उत्पादन की कीमत को प्रभावित नहीं कर सकती। इसका आकार बाज़ार की तुलना में बहुत ही छोटा होने के कारण कीमत पर इसका कोई नियंत्रण नहीं रहता। यह बाज़ार भाव जितना चाहे उतना माल बेच सकती है। इसी कारण से इसकी माँग-वक्र पूर्णतः लोचशील होती है। परंतु यह बात ध्यान देने योग्य है कि एक पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार की बाज़ार-माँग कभी पूर्णतः लोचशील होनी आवश्यक नहीं। चित्र 8.1 (a) की माँग-वक्र D यही दिखा रही है। यह सभी परिवारों की इस वस्तु के लिए कुल माँग है। आपको ध्यान होगा कि इकाई 2 में व्यक्तियों की अलग-अलग सामूहिक माँग-वक्रों के संबंध पर चर्चा हुई थी। इसी तरह, बाज़ार की आपूर्ति के बारे में भी उसी इकाई 2 में बातचीत की गई थी।

बाज़ार कीमत एक फर्म के उत्पादन से प्रभावित नहीं होती। अतः इस फर्म द्वारा एक इकाई अधिक बेचने से प्राप्त सीमांत आगम भी बाज़ार में प्रचलित कीमत के ही समान होगी। औसत आगम तो परिभाषा ही इस प्रकार होती है कि यह कीमत के समान रहती है (औसत आगम = कुल आगम ÷ बेची गई इकाइयाँ)। अतः इस फर्म के लिए **P = AR = MR**। यह तीनों उत्पादन के स्तर के साथ घटते-बढ़ते नहीं, स्थिर रहते हैं।

कुल आगम (TR) : फर्म की कुल आय आगम उस द्वारा बेची गई इकाइयों तथा कीमत का गुणनफल ही है।

अतः $TA = P \times Q$.

फर्म कीमत स्वीकारकर्ता है। अतः प्रत्येक अतिरिक्त इकाई उत्पादन से इसकी कुल आगम में होने वाली वृद्धि का परिमाण स्थिर रहता है।

औसत आगम (AR) : फर्म द्वारा प्राप्त इकाई आगम ही है। यह कुल आगम तथा उत्पादन का अनुपात है। फर्म अपना उत्पादन एक स्थिर कीमत पर ही बेचती है। अतः गणितीय दृष्टि से

$$AR = TR/Q = P \times Q/Q = P$$

सीमांत आगम (MR) : उत्पादन में एक इकाई परिवर्तन से कुल आगम में आया परिवर्तन ही सीमांत आगम कहा जाता है। यह उत्पादन में परिवर्तन के कारण TR के परिवर्तन की दर है। यदि उत्पादन में एक इकाई परिवर्तन हो तो MR यह व्यक्त करता है कि कुल आगम में कितना बदलाव आएगा।

$$MR = \Delta TR/\Delta Q$$

कीमत स्वीकारकर्ता फर्म के लिए MR भी कीमत के समान ही रहता है।

$$MR = P$$

जब भी फर्म अपना उत्पाद एक इकाई बढ़ाती है, इसकी कुल आगम में $1 \times P$ की वृद्धि हो जाती है। MR को हम उत्पादन में परिवर्तन के कारण TR में परिवर्तन मानते हैं, अतः $MR = 1 \times P = P$

8.5 फर्म का संतुलन

सभी पूर्ण प्रतियोगी फर्में अधिकतम लाभ कमाना चाहती है। यह लाभ (π) कुल आगम तथा कुल आगत का अंतर ही है।

$\pi = TR - TC$

एक फर्म उस समय संतुलन में कही जाती है जब उसका उत्पादन इतना हो कि उसे अधिकतम लाभ मिले।

अधिकतम लाभ कमाने के लिए फर्म को कितना उत्पादन करना चाहिए, इस निर्णय में MC तथा MR का बहुत महत्त्व होता है। ये बातें ध्यान रखने योग्य हैं :

- यदि MR > MC तथा MC बढ़ रही हो तो फर्म उत्पादन बढ़ाएगी।
- यदि MR < MC तथा MC बढ़ रही हो तो फर्म उत्पादन कम करेगी।
- यदि MR = MC तथा MC बढ़ रही हो तो फर्म का उत्पादन संतुलन स्तर तक पहुँच गया है और लाभ भी अधिकतम हो गए हैं।

अतः एक प्रतियोगी उद्योग में संतुलन के लिए दो शर्तें पूरी होना आवश्यक है :

i) सीमांत आय = सीमांत लागत

ii) संतुलन के पश्चात् सीमांत लागत सीमांत आय से अधिक हो।

अल्पकाल और दीर्घकाल दोनों में एक जैसी शर्तें हैं। अंतर केवल इतना है कि अल्पकाल में सामान्य से अधिक लाभ या हानि हो सकती है। ऐसा स्थिर लागतों व फर्मों को उद्योग में प्रवेश करने की या उद्योग छोड़ने की स्वतंत्रता न होना है। दीर्घकाल में न तो असमान्य लाभ होते हैं और न ही कोई हानि। इसके पीछे दो कारण है। एक, सभी लागतें परिवर्तनीय होती है और उत्पादन न करने की दशा में बचा जा सकता है। दूसरे, फर्मों को उद्योग में आने व उद्योग छोड़ने की स्वतंत्रता होती है।

8.5.1 अल्पकाल में संतुलन

विषय प्रवेश : हमने पिछली इकाई में यह तो बताया ही था कि अल्पकाल वह अवधि है जिसमें फर्म परिवर्तनशील साधनों के प्रयोग में फेरबदल द्वारा अधिकतम लाभ कमाने का प्रयास करती है। इस अवधि में स्थिर साधनों की मात्रा नहीं बदल सकती। अतः अल्पकाल में संतुलन की चर्चा करते समय हमें लागतों की दशा भी स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए। यदि फर्मों की लागतें भिन्न-भिन्न हों तो उद्योग की संतुलन स्थिति उस अवस्था से अलग हो जाएगी जब सभी फर्मों की लागतें एक-जैसी रही हों। अतः हम फर्म तथा उद्योग के संतुलन की तीन अवस्थाओं का निरूपण और विश्लेषण करेंगे।

क) सभी साधन समरूप हैं : हमारी पहली अवस्था है कि उत्पादन के सभी साधन समरूप हैं। इनसे उद्यम भी सम्मिलित हैं। अतः सभी उत्पादक इकाइयों में सभी साधनों को एक ही जैसे अनुपात में संयोजित कर उत्पादन सम्पन्न होगा। प्रत्येक फर्म का प्रयास न्यूनतम लागत पर उत्पादन करना है। उनकी लागत-वक्र भी (साधनों की समरूपता तथा समान अनुपातों के कारण) एक-समान होंगी।

ख) दूसरी अवस्था में हम यह मान लेते हैं कि अन्य सभी साधन तो समरूप हैं, परंतु उद्यम में कुछ न कुछ अंतर अवश्य होता है। इस मान्यता के परिणामस्वरूप कुछ फर्में अपेक्षाकृत अधिक कुशल हो सकती हैं और वे उन्हीं साधनों का प्रयोग कर अपेक्षकृत कम लागत पर उत्पादन करने में सफल रहती हैं।

ग) तीसरी अवस्था में तो सभी साधनों को विषम माना जा सकता है। अतः केवल उद्यम ही नहीं, वरन् अन्य साधनों की कुशलता में अंतर के कारण भी लागतों में अंतर आ जाएगा।

एक समान लागत की दशा में संतुलन

आइए अब फर्म के अल्पकालीन संतुलन को एक बार फिर एक रेखाचित्र के माध्यम से समझने का प्रयास करें। चित्र 8.2 में हम फर्म के संतुलन की तीन संभव दशाएँ दिखा रहे हैं। हम यह मानकर चल रहे हैं कि यह फर्म साधन बाज़ार पूर्ण प्रतियोगी खरीदारों में से एक है और वहाँ की नियत कीमतों पर समरूप साधन इकाइयाँ प्राप्त कर उत्पादन कार्य करती हैं। पूर्ण प्रतियोगिता का परम्परागत सिद्धांत इसी पूर्वधारणा पर आधारित है।

चित्र 8.2

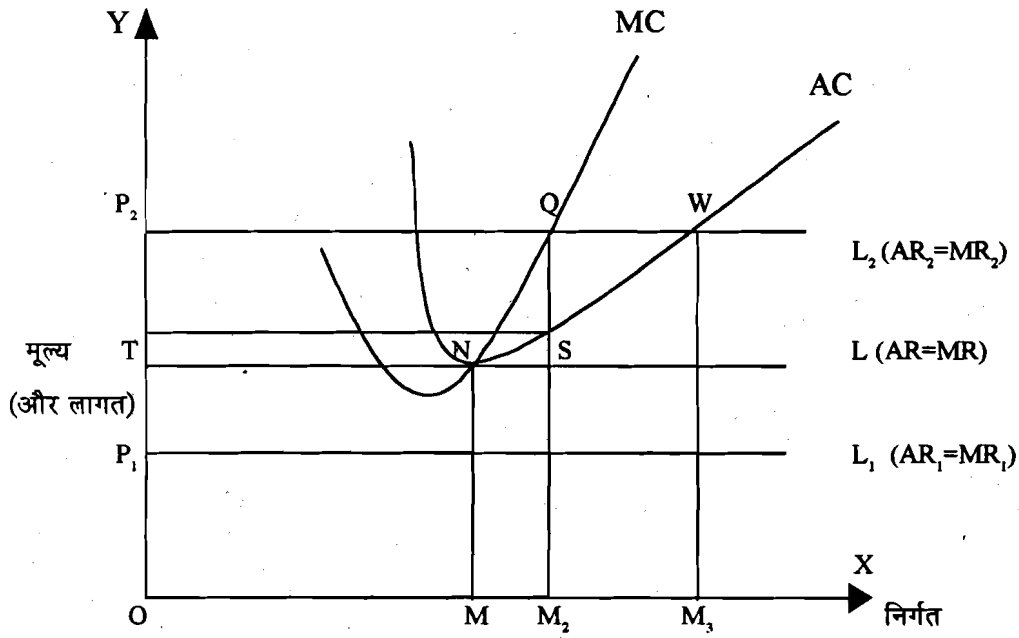

चित्र 8.2 : बिंदु N जहाँ MC = AC = AR = MR के अतिरिक्त भी किसी अन्य बिंदु पर अल्पकालीन संतुलन संभव है। यदि अल्पकाल कीमत $P_2 > P$ तो फर्म OM_2 उत्पादन कर P_2LRS 'अतिशय लाभ' कमा सकती है। यदि अल्पकालीन कीमत $P_1 < P$ तो फर्म सभी लागतें पूरी नहीं कर पाती। फिर भी, यदि कम से कम परिवर्ती लागतें पूरी हो रही हों तो यह उत्पादन करती रहती है। MC की संतुलन शर्त के अनुसार, उत्पादन का स्तर OM_1 निर्धारित होता है।

चित्र में हमने AC तथा MC वक्रों को बनाया है तथा हम यह मानते हैं कि प्रत्येक फर्म न्यूनतम संभव लागत पर उत्पादन करने का प्रयास करती है। लाभ स्थिति अगर आरंभ में वस्तु की कीमत OP_2 हो तो क्या होगा? सभी फर्म अपना उत्पादन अधिकतम लाभ कमाने की दृष्टि से निश्चित करेंगी। यह स्तर OM_2 होगा, जिसे प्रतियोगी कीमत OP_2 पर बेचा जाएगा। औसत लागत M_2R होगी तथा प्रति इकाई अतिरिक्त लाभ LR होगा। क्षेत्रफल P_2LRS फर्म द्वारा कमाए गए सारे 'असमान्य-लाभ' को दर्शाता है। उद्योग की सभी इकाइयाँ संतुलन में होंगी एवं अधिकतम लाभ कमा रही होंगी।

सामान्य लाभ स्थिति : अल्पकाल में यह स्थिति बनी रहेगी क्योंकि न तो ये फर्में नई स्थिर लागत-जन्य संयंत्र आदि लगा पाती हैं तथा न ही कोई नई फर्म उद्योग में प्रवेश कर पाती हैं। किंतु दीर्घकाल में नई फर्में बाज़ार में प्रवेश कर असमान्य लाभ समाप्त कर देंगी।

सामान्य लाभ स्थिति : यदि कीमत OP_2 के स्थान पर OP होती तो सभी फर्में OM स्तर पर उत्पादन करते हुए सामान्य लाभ अर्जित करतीं। औसत लागत-वक्र OM उत्पादन स्तर पर औसत आगम को स्पर्श करती। यही अल्पकाल में पूर्ण संतुलन होगा। उद्योग में उतनी ही फर्में होंगी जितनी होनी चाहिए तथा वे सभी सामान्य लाभ कमाने की स्थिति में होंगी।

हानि की स्थिति : इसके विपरीत, यदि कीमत OP_1 हो तो फिर भी इस उद्योग में सभी इकाइयाँ OM_1 बिंदु पर उत्पादन करते हुए संतुलन प्राप्त करेंगी। परंतु यह संतुलन ऐसा होगा जिसमें सभी P_1QNT के समान हानि उठा रही होंगी। यह हानि का वह न्यूनतम स्तर है जिसे सभी इकाइयों को सहन करना पड़ता है। हाँ, दीर्घकाल तक यह स्थिति नहीं चल सकती। कुछ न कुछ फर्में (दीर्घकाल में) इस उद्योग से बाहर निकल ही जाएँगी। इस प्रकार से शेष फर्में सामान्य लाभ कमा पाएँगी। अब यह स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि एक हानि उठा रही फर्म में क्यों बनी रहेगी? फर्म के कार्य करते रहने के लिए यह ज़रूरी है कि उसकी परिवर्तनशील लागतें पूरी होती रहें। इस बात को हम चित्र 8.4 द्वारा समझा रहे हैं। इस चित्र में भी फर्म की लागत-वक्र तथा आगम वक्र दिखाई गई है। फर्म तभी तक काम करते रह सकती है जब तक कि परिवर्ती लागतें पूरी हो रही हों। यदि फिर भी वह काम बंद करने का निर्णय करती है तो उसे अपने स्थिर निवेश को बर्बादी का भारी लाभ उठाना पड़ेगा। यदि वह कार्य करती रहती है तो बाज़ार में उसका स्थान बना रहता है तथा उसकी पूँजी एवं संयंत्र आदि कबाड़ बनने से बच जाते हैं।

चित्र 8.3

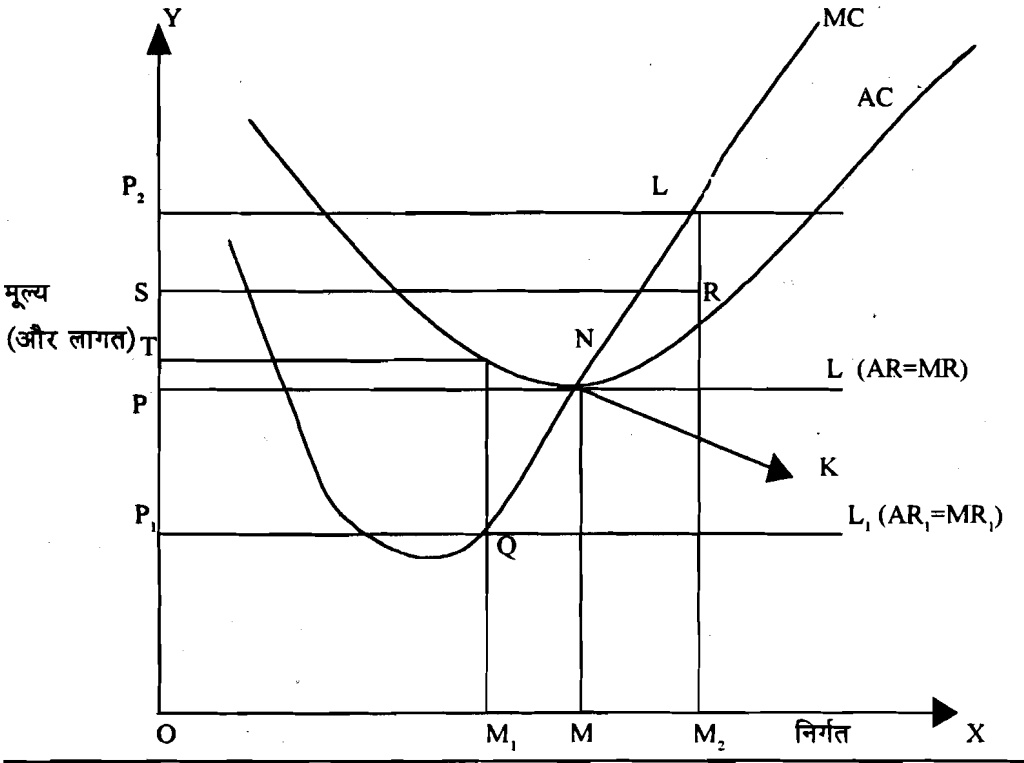

चित्र 8.3 : अल्पकाल में फर्म को OM पर उत्पादन करना ही बेहतर लगता है, यद्यपि कीमत OP औसत लागत MS को पूरा नहीं कर पाती। फर्म की स्थिर लागत TRSV काफी ज़्यादा है। उत्पादन में बने रहते हुए फर्म स्थिर लागत की पूर्ति की ओर TPQV के समान योगदान करती रह सकती है। अतः OP कीमत पर इसका 'न्यूनतम-हानि' उत्पादन स्तर OM होगा।

चित्र 8.3 पर ध्यान दें। कीमत स्तर OP पर फर्म का न्यूनतम-हानि उत्पादन स्तर OM है। अतः कीमत औसत परिवर्ती लागत MV से QV ज़्यादा है। इसी को स्थिर लागत पूरा करने में प्रति इकाई

योगदान कहा जाता है। इस स्थिति में फर्म को कार्य करते रहना ही श्रेयस्कर लगता है। परिवर्ती लागतों के पूरा होने के बाद स्थिर लागतों का भी कुछ न कुछ हिस्सा तो पूरा हो ही जाता है। हम PQVT को स्थिर लागतों की ओर समग्र योगदान कह सकते हैं। फर्म कार्य करते रहकर अपनी संभावित हानि को इस परिमाण (PQVT) द्वारा कम कर सकती है। फिर भी RSQP के समान हानि इसे बर्दाश्त करनी ही पड़ती है, परंतु यह हानि कुल संभावित हानि अर्थात् कुल स्थिर लागत RSVT से काफी कम है। अतः उसकी हानि RSVT-PQVT ही रह जाती है।

यदि अल्पकाल कीमत OP_1 हो जाए तो फर्म की औसत लागत MS रहते हुए उसे प्रति इकाई SQ_1 हानि उठानी पड़ेगी। यहाँ तो उसकी परिवर्तनशील साधन पर आई लागत भी पूरी नहीं हो पाती। OM उत्पादन स्तर पर फर्म की हानि में स्थिर लागत RSVT के अतिरिक्त P_1Q_1VT की ओर वृद्धि हो जाती है। यहाँ तो फर्म को अल्पकाल में भी काम बंद करना ही श्रेयस्कर लगेगा। वास्तव में, यदि फर्म को OT के बराबर न्यूनतम प्रति इकाई कीमत नहीं मिलती, जिससे इसकी परिवर्ती लागत पूरी हो सके, तो वह बिल्कुल ही उत्पादन नहीं कर पाएगी।

चित्र 8.4

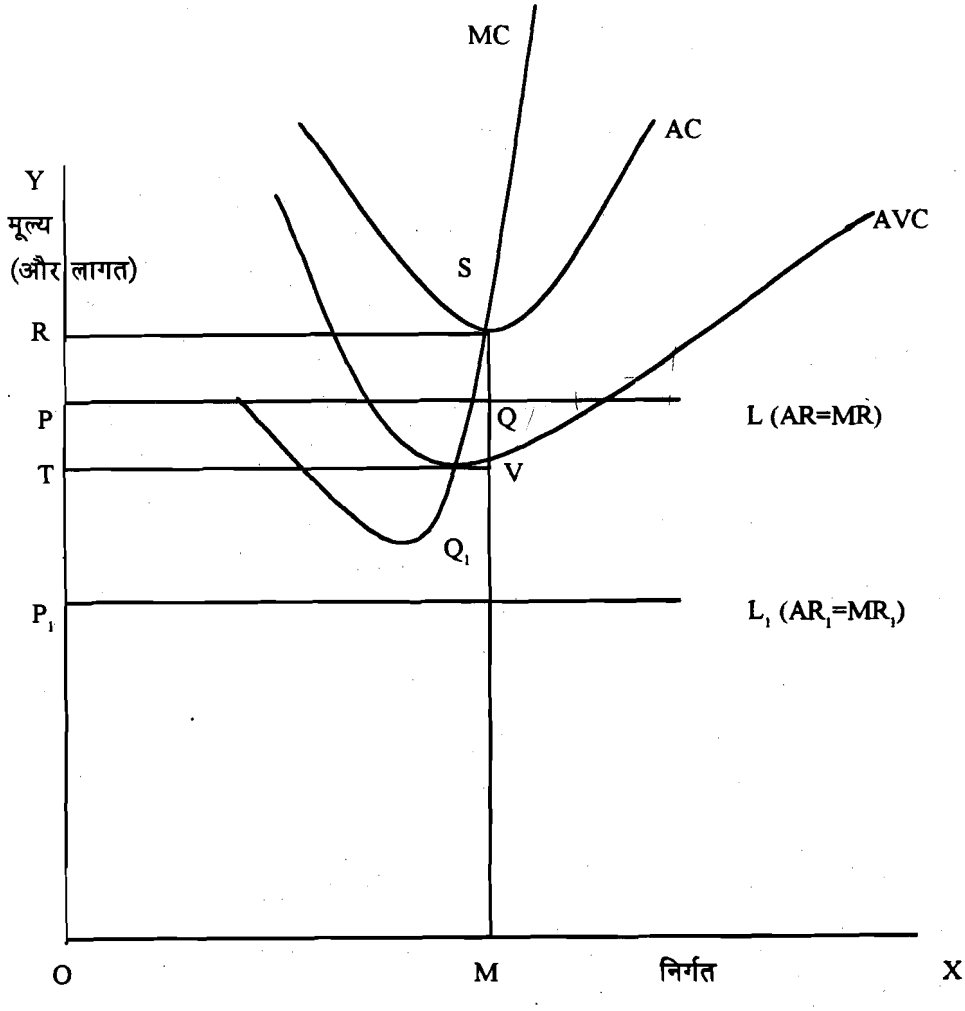

चित्र 8.4 एक फर्म का दीर्घकालिक संतुलन की स्थिति दर्शाता है जहाँ वह सामान्य लाभ ही कमाती है।

सभी उद्यमी एक समान कुशल न होने की दशा में संतुलन

आइए, अब उस स्थिति पर ध्यान दें जहाँ सभी फर्में एक जैसी कुशल नहीं होतीं। साधनों की कीमतें तो सभी फर्मों के लिए एक-समान रहती हैं, परंतु उद्यमी की दक्षता में अंतर के कारण कुछ फर्मों की औसत लागत अन्यों के मुकाबले में कम या ज़्यादा हो सकती है। अधिक कुशल उद्यमी कम लागत पर उत्पादन कर सकेंगे। अतः समरूप उत्पादन को एक ही समान कीमत बेचने वाली फर्मों के अधिकतम लाभ कमाने वाले उत्पादन स्तर समान नहीं रह पाएँगे। प्रत्येक फर्म का लाभ स्तर भी समान नहीं रहेगा।

मान लीजिए कि उद्योग में चार फर्में हैं। फर्म **A** का उद्यमी सबसे कुशल है। यह वर्तमान या प्रचलित कीमत पर असमान्य लाभ कमाता है।

फर्म **B** कम कुशल होने के कारण प्रचलित कीमत पर केवल सामान्य लाभ ही अर्जित कर पाती है। फर्म **C** और भी कम कुशल है तथा कुछ हानि उठाती है। परंतु यह फर्म अभी भी परिवर्ती लागतें पूरी करने में सफल रहती है। अतः यह अल्पकाल में कार्य करती रह सकती है और इस प्रकार हानि को न्यूनतम स्तर पर बनाए रख सकती है। चौथी फर्म **D** सभी से ज़्यादा अकुशल है। यह तो उत्पादन के किसी स्तर पर परिवर्तनशील लागतें भी पूरी नहीं कर पाती। अतः हानि का स्तर न्यूनतम रखने का इसके पास तो अल्पकाल में भी एक ही रास्ता बचता है—काम बंद करना।

सभी उत्पादन साधनों की कुशलता भिन्न-भिन्न होने पर संतुलन

तीसरी स्थिति में तो सभी साधनों के दक्षता स्तरों में भिन्नता पाई जाती है। अतः फर्मों की लागतों में अंतर और भी अधिक व्यापक होंगे। ऊपर वाली चार फर्मों जैसी ही स्थिति रहेगी, परंतु फर्मों के बीच लागत स्तरों में अंतर और ज़्यादा महत्त्वपूर्ण हो जाएँगे।

8.5.2 दीर्घकाल में संतुलन

हम जानते हैं कि दीर्घकाल में उद्योग में प्रवेश या इससे निर्गमन पर कोई प्रतिबंध नहीं होता। सभी उत्पादक साधन भी पूरी तरह गतिशील होते हैं। पूर्ण प्रतियोगी फर्में सामान्य लाभ कमाती रहेंगी। उद्योग में उस बिंदु तक फर्मों का आना-जाना लगा रहता है जब तक कि सभी का लाभ सामान्य स्तर तक नहीं पहुँच जाता। बाहर से इस उद्योग में वही आएगा जिसे यहाँ पर सामान्य स्तर तक नहीं पहुँच जाता। बाहर से इस उद्योग में वही आएगा जिसे यहाँ पर सामान्य लाभ की आशा हो। वही इस उद्योग को छोड़ेगा जिसे बाहर जाकर कुछ बेहतरी की उम्मीद हो। आइए इसी बात को कुछ और विस्तार से समझें।

यदि इस उद्योग में सभी फर्मों को असमान्य लाभ हो रहा हो तो नई फर्में इसमें प्रवेश करेंगी और पूर्ति का विस्तार होगा। पूर्ति-वक्र बाहर की ओर खिसककर जाएगा। माँग-वक्र के अपरिवर्तित रहने पर पहले वाली कीमत-स्तर टिक नहीं पाती— पूर्ति की वृद्धि से कीमत कम हो जाएगी। यह कीमत गिरने का क्रम तब तक चलता रहेगा जब तक कि सभी फर्में उस स्थिति में नहीं पहुँच जातीं जहाँ वे केवल अपनी लागतें ही पूरी कर पाती हैं। लाभ का स्तर शून्य हो जाता है।

दूसरी ओर, यदि उद्योग में घाटे की स्थिति व्याप्त हो तो कुछ फर्में काम बंद कर देती हैं। इससे पूर्ति कम हो जाती हैं, अर्थात् पूर्ति-वक्र बाईं ओर खिसककर जाता है। इसके कारण माँग स्थिर रहने पर कीमत-स्तर ऊपर उठता है। यह निर्गमन एवं कीमत वृद्धि का क्रम तब तक चलता रहता है जब तक बची हुई फर्में अपनी लागतें पूरी कर सामान्य लाभ न कमाने लगें। दीर्घकाल में फर्म के संतुलन चित्र 8.5 में दर्शाया गया है।

चित्र 8.5

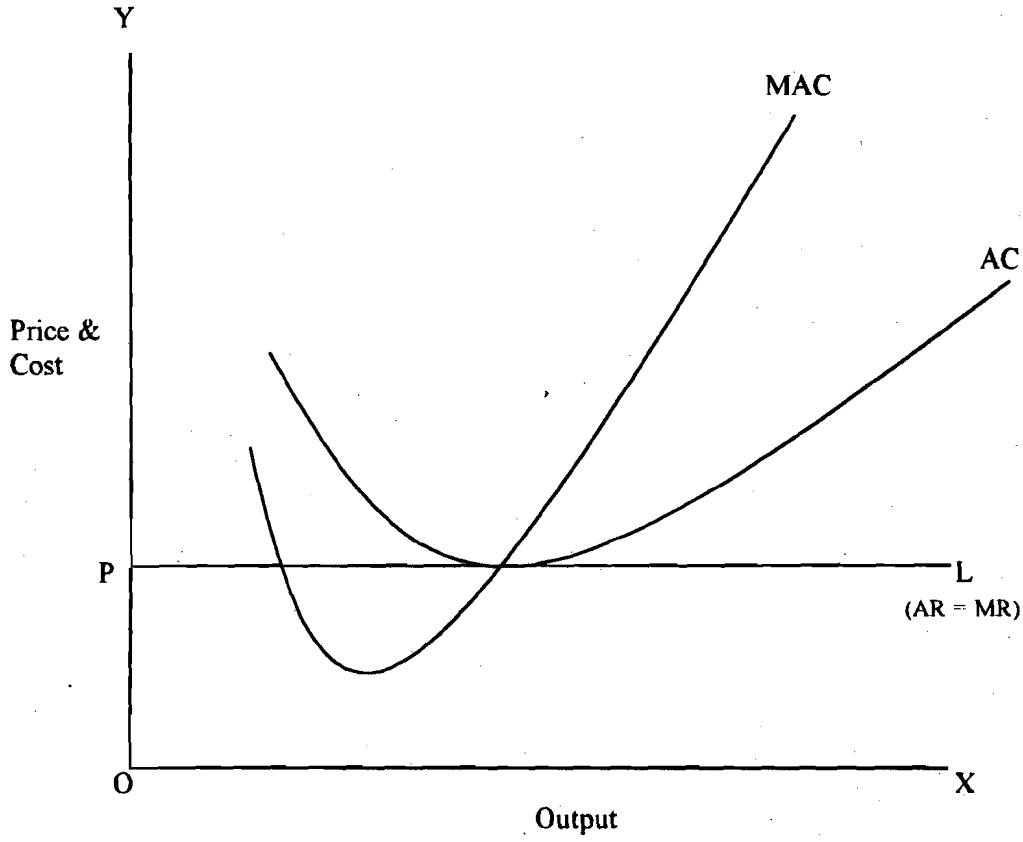

चित्र 8.5 दीर्घकाल में फर्म का संतुलन दर्शाता है।

8.6 सामान्य कीमत

मार्शल के अनुसार सामान्य कीमत वह कीमत है जो कि माँग और पूर्ति की वर्तमान दशाओं में अपेक्षित हो सकती है। यहाँ समय बहुत महत्त्वपूर्ण कारक है। दीर्घ एवं अल्पकाल की सामान्य कीमतें अलग-अलग हो सकती हैं। परंतु वास्तविक व्यवहार में दीर्घकालिक सामान्य कीमत स्तर पर हम शायद ही सभी पहुँच पाते हैं। हम जानते हैं कि कल की तरह से ही दीर्घकाल भी कभी नहीं आता। किसी न किसी शर्त में दीर्घकालिक संतुलन के निर्धारित होने से पूर्व ही पुनः परिवर्तन हो ही जाता है।

बोध प्रश्न 2

1) सत्य अथवा असत्य बताइए :

क) सीमांत आगम उत्पादन की प्रति इकाई आगम है। (सत्य/असत्य)

ख) पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म कीमत निर्धारक नहीं होती। (सत्य/असत्य)

ग) पूर्ण प्रतियोगिता में फर्मों के प्रवेश और निर्गमन पर कोई रुकावट नहीं होती। (सत्य/असत्य)

घ) पूर्ण प्रतियोगिता परिवहन लागतों की उपस्थिति मानकर चलती है। (सत्य/असत्य)

2) जब उद्यम के अतिरिक्त सभी साधन समरूप हों तो फर्म का अल्पकालिक संतुलन समझाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) फर्म का दीर्घकालिक संतुलन समझाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

4) हानि उठाने वाली फर्म अल्पकाल में कब उद्योग से बाहर निकल जाती है?

.....

.....

.....

8.7 उत्पादन की बचतें तथा अपबचतें

अब हम उद्योग की अल्प और दीर्घकालिक पूर्ति-वक्र की रचना की ओर ध्यान देंगे। परंतु उससे पूर्व बाहरी बचतों और अपबचतों का अर्थ बताएँगे। ये बाहरी बचतें/अपबचतें आंतरिक बचतों और अपबचतों से भिन्न होती हैं। आंतरिक बचतें/अपबचतें आंतरिक बचतों और अपबचतों से भिन्न होती हैं। आंतरिक बचतें/अपबचतें तो साधन अनुपातों अथवा आंतरिक संगठन आदि में बदलाव का परिणाम होती हैं।

दूसरी ओर, बाहरी बचतें/अपबचतें एक फर्म नहीं बल्कि सारे उद्योग के उत्पादन में वृद्धि से जुड़ी हुई हैं। यदि उद्योग के विस्तार से इसकी सभी फर्मों की उत्पादन लागत कम हो जाए तो हम इसे बाहरी मितव्ययता/बचत कहेंगे। दूसरी ओर, उद्योग प्रसार के कारण सभी फर्मों की उत्पादन लागतों में वृद्धि की संभावना को नकारा नहीं जा सकता। यह अपबचत की स्थिति होगी।

8.8 पूर्ण प्रतियोगी उद्योग का आपूर्ति-वक्र

इस इकाई में हमारा मुख्य उद्देश्य अंततः पूर्ण प्रतियोगी उद्योग की पूर्ति-वक्र का निर्माण है। किंतु इस पूर्ति-वक्र का आकार सदैव एक जैसा नहीं रहता। यह आकार, आधारभूत उत्पादन शर्तों पर निर्भर करता है तथा उत्पादन शर्तें कुछ मान्यताओं के आधार पर निरूपित होती हैं। सबसे पहली बात तो यही है कि प्रत्येक उत्पादक साधन की सभी इकाइयाँ परस्पर समरूप हैं तथा इस उद्योग के लिए

उनकी आपूर्ति भी पूर्णतः लोचशील है। हम साधन बाज़ार में भी पूर्ण प्रतियोगिता मानते हैं ताकि उत्पादक को किसी भी साधन की प्रत्येक इकाई के लिए एक जैसी ही कीमत चुकानी पड़े।

अल्पकालीन आपूर्ति-वक्र

हम पूर्ण प्रतियोगी उद्योग की पूर्ति-वक्र का निर्धारण तीन प्रकार की अवस्थाओं के अनुरूप करेंगे :

अल्पकालिक पूर्ति-वक्र जबकि उद्योग की घटक फर्मों की संख्या तथा प्रत्येक के उत्पादन का पैमाना स्तर भी पूर्व-निर्धारित होता है।

हम यह मानकर चलते हैं कि सभी फर्में सभी समरूप साधनों का प्रयोग करती हैं। इसी कारण से उनका लागत-वक्र भी एक-समान होगा। प्रत्येक फर्म, प्रारंभिक अवस्था में दीर्घकालिक संतुलन की भाँति OM_1 उत्पादन OP_1 कीमत पर बेचती रहेगी (चित्र 8.6)। उद्योग की सभी फर्मों के लिए सीमांत आगम वक्र MR अल्प और दीर्घकालिक सीमांत लागत MC के समान होगी। सभी फर्मों को सामान्य लाभ ही मिलता रहेगा।

चित्र 8.6

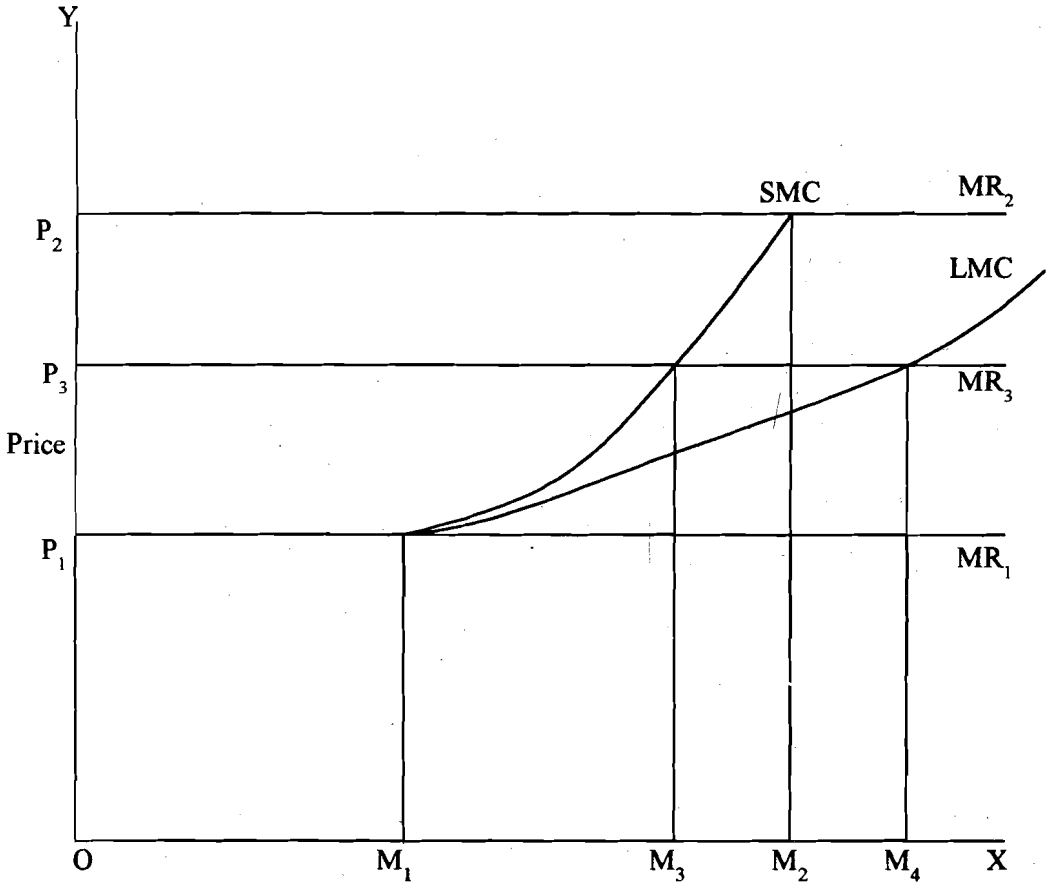

चित्र 8.6 : उद्योग का दीर्घकालीन संतुलन दिखाता है। फर्म OM_1 उत्पादन OP_1 कीमत पर बेचते हैं।

आपूर्ति-वक्र का आकार जानने के लिए कीमत में परिवर्तन का प्रभाव जानना होगा। आइए कीमत बढ़ाकर OP_2 कर दें और देखें कि इस उद्योग की इकाइयाँ किस प्रकार व्यवहार करती हैं। अब प्रत्येक फर्म की AR=MR वक्र P_2MR_2 हो जाती है। अल्पकाल में फर्म अपनी सीमांत आगत पर

ही उत्पादन बढ़ा सकती है। अतः उसकी अल्पकाल सीमांत लागत-वक्र ही अल्पकालिक आपूर्ति-वक्र बन जाती है। अब नई कीमत OP_2 पर $MR = MC$ द्वारा हमें उत्पादन का नया स्तर OM_2 प्राप्त होता है। यही बात प्रत्येक फर्म पर लागू होगी। अतः उद्योग का आपूर्ति-वक्र वस्तुतः घटक फर्मों की अल्पकालिक आपूर्ति (सीमांत लागत) वक्रों के क्षैतिज योगफल के समान होगा।

फर्म का दीर्घकालिक पूर्ति-वक्र : प्रत्येक फर्म का उत्पादन बढ़ने पर उद्योग व्यापी पूर्ति-वक्र बाहर की ओर खिसक जाएगा। बाज़ार में यदि माँग की अवस्था अपरिवर्तित रहे तो नया आपूर्ति-वक्र की अपेक्षा दाहिनी ओर (उसी पुराने) माँग-वक्र को काटेगा। दूसरे शब्दों में, सारा उद्योग अपने बढ़े हुए उत्पादन को अपेक्षाकृत कम कीमत पर ही बेच पाएगा। अतः जब सारी फर्में OP_2 पाने की आशा में उत्पादन बढ़ा लेती हैं तो उन्हें यह अहसास होता है कि वे ज्यादा माल केवल OP_3 कीमत पर बेच पाएँगी ($OP_3 < OP_2$)। हाँ यह सत्य है कि दीर्घकाल में वे OM_3 स्तर पर उत्पादन कर उसे OP_3 कीमत पर बेच सकेंगी। यह बात ध्यान देने योग्य है कि अल्पकाल में $SMC = MR_3$ द्वारा निर्धारित उत्पाद OM_4 ही होगा, जो कि OM_3 से कम है। यह भी स्पष्ट है कि दीर्घकालिक MC वक्र, LMC अल्पकालिक MC वक्र, SLC की अपेक्षा कम तीखे ढाल वाली रहती है।

लेकिन उद्योग में फर्मों की संख्या स्थिर रहने पर भी उस उद्योग की दीर्घकालिक संतुलन OM_3 उत्पादन एवं OP_3 कीमत पर ही होगा। उद्योग की दीर्घकालिक सीमांत लागत-वक्र भी अपेक्षाकृत कम तीखे ढलान की होगी तथा अल्पकाल की अपेक्षा उत्पादन वृद्धि भी अधिक होगी प्रत्येक फर्म का उत्पादन M_1M_4 की बजाए M_1M_3 हो जाएगा। अतः दीर्घकालिक पूर्ति-वक्र भी अल्पकालिक पूर्ति की अपेक्षा धीमे-धीमे ऊपर की ओर उठेगी। अब एक और भी महत्त्वपूर्ण तथ्य पर हमें ध्यान देना होगा : OP_3 कीमत पर उद्योग की सभी फर्मों की संख्या को अपरिवर्तित रखा है। किंतु पूर्ण प्रतियोगिता में शीघ्र ही नई फर्में इस उद्योग की ओर आकृष्ट होंगी।

8.8.1 फर्मों की संख्या में परिवर्तन

उद्योग का दीर्घकालीन पूर्ति-वक्र : आइए अब हम दीर्घकाल में उस स्थिति की ओर ध्यान दें जिसके होने की संभावना अधिक है। यहाँ न केवल फर्मों का आकार बल्कि उनकी संख्या भी बदल सकती है। नई फर्में तब तक इस उद्योग में आती रहेंगी जब तक कि असमान्य लाभ पूरी तरह से समाप्त नहीं हो जाता। अतः यद्यपि अल्पकाल में सभी फर्मों ने OP_2 कीमत पर OM_2 उत्पादन करने का प्रयास किया था, परंतु अंततः दीर्घकाल में वे अपनी आरंभिक स्थिति, अर्थात् OP_1 कीमत पर OM_2 उत्पादन पर लौट आएँगी। सीमांत आगम वक्र P_1MR_4 हो जाएगा जो कि P_1HR_1 के समान है। यद्यपि सभी फर्में OM_1 जितना ही उत्पादन करेंगी परंतु फर्मों की संख्या ज़्यादा हो जाने से उद्योग का उत्पादन कहीं ज़्यादा हो जाएगा। नई फर्मों के आगमन के कारण दीर्घकालिक उद्योग-व्यापी पूर्ति-वक्र क्षैतिज अक्ष के समानांतर बन जाएगा। नई फर्में भी पुरानी फर्मों के ही समान होंगी एवं सामान्य लाभ कमाएँगी। अतः सभी साधनों के समरूप होने की दशा में अनिर्बंध प्रवेश के कारण उद्योग की दीर्घकालिक पूर्ति-वक्र क्षैतिज-अक्ष के समानांतर सरल रेखा होगी। प्रत्येक उत्पादन स्तर उसी स्थिर आपूर्ति कीमत पर ही उपलब्ध होता रहेगा।

उद्योग का अल्पकालीन पूर्ति-वक्र : आइए अब साधनों की समरूपता की मान्यता को नकारने का प्रभाव देखें। आमतौर पर ऐसा देखा गया है कि अन्य साधन समान ही रहें तो भी उद्यम की दक्षता के स्तर में अंतर आ ही जाते हैं। परंतु अल्पकाल में पूर्ति-वक्र पर उद्यम कुशलता के अंतरों का खास प्रभाव नहीं पड़ता। वह अभी भी सभी घटक फर्मों की अल्पकालिक लागत-वक्रों के क्षैतिज योग द्वारा ही बनाई जा सकती है। हाँ यह बात अवश्य है कि अब पृथक-पृथक फर्मों के सीमांत लागत-वक्र भिन्न-भिन्न स्वरूप के हो सकते हैं और उनको जोड़ने में कुछ ज़्यादा सावधानी एवं प्रयास की जरूरत

पड़ेगी। अल्पकालिक पूर्ति-वक्र का सामान्य स्वरूप की ओर उठता हुआ होता है, परंतु असमरूप साधन दक्षता के कारण इसका यह उठाव कुछ ज़्यादा तीखा हो जाता है।

उद्योग में प्रवेश तथा निर्गमन पर कोई बाधा न होने के कारण इसकी दीर्घकालिक पूर्ति-वक्र भी ऊपर की ओर उठता हुआ ही बनता है, परंतु उसका उठाव अल्पकालिक पूर्ति की अपेक्षा कम रहता है।

आगतों की कीमतों, तकनीकी ज्ञान, साधनों की गुणवत्ता, फर्मों पर कर आदि किसी भी उत्पादन एवं लागत संबंधों को प्रभावित करने वाले कारक के प्रभावस्वरूप उद्योग की अल्प एवं दीर्घकालिक पूर्ति-वक्रों में खिसकन (**shift**) आती है। उदाहरण के तौर पर, ईंधन और ऊर्जा की कीमतों में वृद्धि सभी चीज़ों की उत्पादन लागत को बढ़ा सकती है। फर्में लागत वृद्धि के कारण उत्पादन घटाने को बाध्य हो जाती है। अतः अल्पकालिक पूर्ति-वक्र बाईं ओर खिसक जाएगी। यह खिसकाव तब तक चलता रहेगा जब तक कि एक नया दीर्घकालिक संतुलन कायम नहीं हो जाता।

बोध प्रश्न 3

1) संक्षेप में बताइए कि बाहरी बचतें और अपबचतें क्या होती हैं? (50 शब्दों में)

.....

.....

.....

.....

.....

2) एक जैसी लागत-वक्रों वाली फर्मों से बने उद्योग की पूर्ति-वक्र का आकार कैसा होगा? (50 शब्दों में)

.....

.....

.....

.....

.....

3) पूर्ण प्रतियोगी उद्योग के आपूर्ति-वक्र की व्याख्या कीजिए, जबकि फर्मों के आकार और संख्या दोनों ही बदल रहे हों।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

8.9 सारांश

इस इकाई में हमने बाज़ार के विभिन्न स्वरूप बताए हैं तथा शुद्ध प्रतियोगिता से भेद करते हुए पूर्ण प्रतियोगिता की व्याख्या की है। उसके लक्षण तथा शर्तें भी बताई गई हैं। पूर्ण प्रतियोगी फर्म कीमत स्वीकारक होती हैं। जहाँ सीमांत आगम वृद्धि सीमांत लागत के समान होता है वहीं फर्म का संतुलन होता है। हमने फर्म के अल्प और दीर्घकालिक संतुलन की व्याख्या भी की है। उद्योग का संतुलन भी समय-अवधि के परिप्रेक्ष्य में समझाया गया है तथा समय तो अल्पकाल एवं दीर्घकाल के सोपानों में बाँटकर यह व्याख्या की गई है।

पूर्ण प्रतियोगी उद्योग के अलग-अलग पहलुओं की चर्चा के आधार पर हम फर्म एवं उद्योग की अल्प एवं दीर्घकालिक पूर्ति-वक्रों का आकर निर्धारित कर पाए हैं।

8.10 शब्दावली

बाहरी बचतें और अपबचतें : उद्योग के प्रसार से यदि फर्म की उत्पादन लागत कम होती है तो इसे बाहरी बचतें कहा जाता है। इसके विपरीत, यदि लागत बढ़ती है तो यह अपबचत होगी। अपबचत के उदाहरणस्वरूप हम कह सकते हैं कि उद्योग के प्रसार के कारण साधन-विशेष की उपलब्ध कम हो सकती है या फिर परिवहन व्यवस्था में भीड़-भाड़ का दुष्प्रभाव भी लागतों पर पड़ सकता है।

आंतरिक बचतें और अपबचतें : फर्म का उत्पादन बढ़ने पर स्थिर साधनों के बेहतर उपयोग, श्रम-विभाजन तथा विपणन में सुधार आदि से फर्म की लागतें कुछ कम हो जाती हैं। इनके विपरीत, स्थिर साधनों पर अत्यधिक भार पड़ने या स्थिर एवं चल साधनों के अनुपात में बदलाव के कारण कभी-कभी लागतें बढ़ भी जाती हैं। यह अपबचत होती है।

दीर्घकाल : वह कालावधि जिसमें फर्म के संयंत्र सहित सभी साधनों में परिवर्तन संभव होता है।

सीमांत लागत (MC) : एक अतिरिक्त इकाई के उत्पादन पर आई लागत।

सीमांत आगम (MR) : एक अतिरिक्त इकाई के विक्रय से मिली अतिरिक्त आगम।

अल्पकाल : वह अवधि जब कम से कम एक साधन तो अवश्य स्थिर रहता है।

8.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Koutsoyiannis, A. 1979. *Modern Microeconomics*, Macmillan; New York, Chapter 3, 4 & 5, pp. 67 to 163.

Salvatore, D. 1983. *Microeconomic Theory*, Schaum's Outline Series, Chapters 7, 8 and 10, pp. 124 to 174 and 196 to 220.

Samuelson, Paul A. and W.D. Nordhaus, 195. *Economics*, McGraw-Hill Book Company, Chapters 21 and 22, pp. 461 to 501.

Lipsey, Richard G. 1979. *An Introduction to Positive Economics*. English Language Book Society/Weidenfold and Nicoloon, Chapters 16, 17, 18 & 19, pp. 201 to 259.

Stronier, Alfred W. and Hague, Douglas C. 1986. *A Text Book of Economic Theory*, Chapters 5, 6 and 7, pp. 103 to 188.

8.11 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा दिशा-संकेत

बोध प्रश्न 1

1) भाग 8.3 देखिए।

2) भाग 8.3 देखिए।

3) भाग 8.2 देखिए।

बोध प्रश्न 2

1) (क) (ख) (ग) (घ)

2) भा 8.5 देखिए।

3) भाग 8.6 देखिए।

4) भाग 8.5 देखिए।

बोध प्रश्न 3

1) भाग 8.7 देखिए।

2) भाग 8.8 देखिए।

3) उपभाग 8.8.1 देखिए।